वेद मंत्रों में विज्ञान

सामान्य जन यह समझते हैं कि वेद आध्यात्मिक ग्रन्थ हैं उसमें देवों की स्तुतियाँ और यज्ञ याग के वर्णन का बाहुल्य है। पर वे देवतत्त्व के निरुपण के अीतरिक्त यज्ञ याग दर्शपूर्ण मास और अग्नीषोम आदि वैज्ञानिक तथ्यों के उद्घाटक हैं। विषय के विस्तार में न जाकर अपने कथ्य को ही प्रस्तुत करता हूँ।

पोलैण्ड में जन्मे निकोलस कोपीर्नकस ने (१४७३-१५४३)'' सूर्य केन्द्रीय सिद्धान्त'' की खोज की इस महान् खगोल विद की सन् १५४३ ई. में जब इस नवीन खोज संबन्धी पुस्तक प्रकाशित हुई तो तहलका मच गया और उसका भयंङ्कर विरोध हुआ। बाद में गैलिलियो ने उनकी खोज की सत्यता को प्रमाणित किया। निकोलस के सूर्य केन्द्रीय सिद्धान्त में यह बताया गया कि सूर्य काले धब्बों से घिरा है। यह खोज सोलहवीं शताब्दी की है पर वेद में लाखों वर्ष पहले वर्णित है।

'' आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥''

- माध्यन्दिन संहिता ३३.४३

इस मन्त्र मे **'' आ कृष्णेन रजसा वर्तमानः''** अर्थात् **''कृष्णेन रजसा आवर्तमानः''** यहि, मन्त्राशा विचारणीय है। सामान्य अर्थ यह है कि सूर्य काले रज (धूलि) से घिरे हुये हैं। यद्यपि निरुक्त के भाष्यकार यास्क ने लोक ही रज हैं ऐसा कहा है तथापि अमरकोष रेणु, धूलि, पांक्षु, रज को पर्यायवाची माना है। उवट और महीधर आचार्यों ने रज को रात्रि लक्षण के साथ व्याख्या की है। रजः शब्द अनेक अर्थ वाला है। यह द्यावा पृथिवी के रूप में भी माना गया है। दोनों आचार्यों ने रात्रि लक्षण अन्धकार को ही कृष्णत्व माना है। अतः वेद मन्त्र में सिद्ध कृष्ण रज को कालीधूल मानना सिद्ध होता है। इस रूप में निकोलस के पश्चात् कालिक खोज, वेद में पहले से ही विद्यमान होने के कारण निरर्थक सिद्ध होती है। उपर्युक्त मन्त्र मे यह विज्ञान पहले से ही है। वेद मन्त्र में विज्ञान है इस हेतु मन्त्र वैज्ञानिक है।

वेद विज्ञान के आधार हैं। द्वितीय मन्त्र- अन्तरिक्ष में स्थित समस्त ग्रह नक्षत्र राशि को अनुकूल बनाने के लिये समस्त शुभ कर्म में एक ऐसा मन्त्र है जो सर्वत्र प्रयुक्त होता है। उस मन्त्र में विज्ञान है। वह मन्त्र मानवों के लिये कल्याणकर, भद्रकर तथा जगत् हितकर है।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

ऋ.स. १.८९.६ शु.य. माध्य.सं. २५/१९

नक्षत्र राशि ग्रहों को अनुकूल शुभफल दाता बनाने के लिये चार मुख्य नक्षत्र स्वामियों की स्तुति की जाती है। २७ नक्षत्रों के २७ स्वामी (अधिप) होते हैं। इस मन्त्र में सत्ताइस स्वामियों की स्तुति न कर उनमें मुख्य चार अधिपों की स्तुति मन्त्र के ४ चरणों में पृथक् पृथक् है :-**''स्वस्ति न इन्द्रो, वृद्धश्रवाः''** इस मन्त्रांश में चित्रा नक्षत्र के स्वामी प्रधान इन्द्र की स्तुति होती है। **''स्वस्ति नः पूषाविश्ववेदाः''**इससे रेवती नक्षत्राधिप पूषन् देवता की स्तुति की जाती है। **'' स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः''**। इस मन्त्रांश से श्रवण नक्षत्राधिप विष्णु की स्तुति न कर उनके वाहन गरुड (जो तीन ऋद्राक्ष से उत्पन्न अरिष्टेनमि है) की स्तुति की गई है। **''स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु''** स्वस्ति कल्याण प्राप्ति के लिये पुष्य नक्षत्र के स्वामी बृहस्पति की प्रार्थना की गई है। इस प्रकार २७ नक्षत्रों, १२ राशियों, १२ लग्नों आकाश स्थित समस्त तारका गण को अनुकूल करने के लिये उनमें से प्रमुख इन्द्र, पूषन् गरुड़ तथा बृहस्पति की संस्तुति कर सभी गगन चरों की स्तुति कर सभी की अनुकूलता प्राप्त की गई है। यह मन्त्र स्वस्त्ययन में प्रयुक्त होता है। इसमें अन्तरिक्ष विज्ञान होने से मन्त्र वैज्ञानिक है। इस मन्त्र के द्रष्टा ऋषि गौतम (राहूगण) हैं।

तृतीय मन्त्र - **संवत् प्रवर्तक दीर्घतमा ऋषि** -(गोतम)

कालचक्र, संवत्तरचक्र, संवत्प्रवर्तक ऋषि दीर्घतमा गोतम हैं। **''ज्योतिश्शास्त्र का इतिहास''** नामक ग्रन्थ में लेखक गोरखनाथ ने यह सिद्ध किया है कि पाश्चात्य जगत् में सप्ताह, मास, वर्ष का ज्ञान बहुत वर्षों तक अथक परिश्रम करने के बाद प्राप्त हुआ। इनके निश्चित करने में प्रयोग द्वारा बहुत समय लगा। पर भारतीय वर्ष का ज्ञान दीर्घतमा ऋषि द्वारा दृष्ट मन्त्र में बहुत पहले ऋग्वेद के अस्यवार्माय सूक्त द्वारा हो गया था।

'' सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा।
त्रिनामि चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः॥

ऋ.सं. १.६४.२

इस ऋचा का उत्तरार्ध (आधा भाग) संवत्सर को व्यक्त करने वाला है। यह इससे स्पष्ट होता है कि तीन ऋतुऐं संवत्सर (वर्ष) में होती हैं ग्रीष्म, वर्षा, हेमन्त। जिस संवत्सर में सभी प्राणी निवास करते हैं उस संवत्सर की स्तुति समस्त मात्राओं से की जा रही है। उपर्युक्त तीन ऋतुओं के अतिरिक्त वेद में ५ ऋतुयें भी प्रमाणित हैं। उस संवत्सर चक्र में ५ अर (ऋतु) लगे हुये हैं।

''पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने'' ऋ. १.१६४.१३

ब्राह्मण ग्रन्थ का कथन है कि संवत्सर की ५ ऋतुऐं होती हैं। हेमन्त शिशिर को एक मानकर। कई ६ ऋतुयें होती हैं।

''षडर आहुरर्पितम्'' ऋ.१.१६४.१२ यहाँ अर शब्द ऋतु के अर्थ में है। अर उसे कहते हैं जो नाभि में चक्र (चक्का, पहिया) के बीच में गये रहते हैं, पहुँचे रहते हैं। चक्र की विशेषता बताते

हुये १२ अरों १२ प्रधियों का तात्पर्य १२ मासों से है। "**द्वादशारं निहतज्जराय**" ऋ. १.१६४.११ "**द्वादश प्रघयश्चक्रमेकम्।**"
तस्मिन्स्मकं त्रिंशता न शङ्कवोऽर्पिता षष्टिर्न चला चलासः।
ऋ.स. १.१६४.४८

उस संवत्सर चक्र नाभि में ३६० दिन ३६० शङ्कु के रूप में लगे हुये हैं। ब्राह्मण ग्रन्थ का कथन है कि संवत्सर के ३६० दिन होते हैं। **षष्टिश्च ह वै त्रीणि च शतानि संवत्सरस्याहोरात्रा (दिनानि) इति च ब्राह्मणं समासेन।** ऋग्वेद का कथन है कि ७२० दिन और रात्रि हैं। यही बात ब्राह्मण ग्रन्थ भी कहते हैं। "**सप्त शतानि विशतिश्च तस्थुः**" ऋ.सं. १.१६४.११ **सप्त च वै शतानि विंशतितश्च संवत्सरस्याहोरात्रा इतिच ब्राह्मण महोरात्रयोर्विभागेन।** इस प्रकार ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के १६४ वे सूक्त की बहुत सी ऋचाओं द्वारा संवत्सर के तीन ऋतु पाञ्च ऋतु ६ ऋतु वर्णन से १२ महीने १२ राशियों से युक्त ६ अर १२ अर सहित संवत्सर चक्र की नाभि से संवत्सर के दिनों रात्रियों का ज्ञान तथा विज्ञान अस्य वामीय सूक्त से प्रकट होता है। इस सूक्त के द्रष्टा दीर्घतमा गोतम ने ज्ञान विज्ञान पूर्ण इस सूक्त का दर्शन किया, उन्होंने कालचक्र, सूर्यचक्र, सूर्यचक्र संवतसर सूक्त का ज्ञान संसार में सबसे पहले किया। अतः वर्ष की खोज भारत में इस दीर्घतमा ने किया।

चतुर्थ मन्त्र - अङ्क विज्ञान-भारत की देन। वेदों से विश्व के १८९ देशों में आज भी सङ्ख्या की दृष्टि से मिलियम डेमिलियन ट्रिमिलियन से बढ़ कर कोई सङ्ख्या विकसित नहीं हुई। पर वेदों मे यह अङ्क १ के लेकर १८ अङ्कों तक तब प्रसिद्ध हुई जब संसार में अङ्क विज्ञान इतना नहीं था। इन अङ्कों का सङ्ख्याओं का वेदों में उल्लेख है। अग्नि चयन यज्ञ में १०८०० ईंटे संपूर्ण चिति बनाने में लगती है। यह अङ्क कैसे गिने गये। शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन संहिता में इस प्रकार इस विज्ञान का वर्णन है :-**इमा मे अग्न इष्टका धेनवः सन्त्वेका च दश च दश च शतं च शतं च सहस्त्रं च सहस्त्रं चायुतं चायुतं च नियुतं च नियुतं च प्रयुतं चार्बुदं च न्यर्बुदं च समुद्रश्च मध्यं चान्तश्च परार्ध २ चैता मे अग्न इष्टका धेनवः सन्त्वमुत्रामुष्मिंल्लोके।**।माध्य.सं. १७.२ / तै.मं. ४/४/११/२३ महीघर भाष्य एक.दश. शत सहस्र अयुत (दश सहस्र) नियुत (लक्ष) प्रयुत (दशलक्ष) कोटि अर्बुद न्यर्बुद अब्ज (खंर्व निखर्व महापद्म शङ्कु) समुद्र मध्य अन्त परार्ध। ये १८ संख्यायें परस्पर दस गुणित दश गुना करने पर संपन्न होती हैं। समाधान हेतु महीधर भाष्य अवलोकनीय। अतः भारत के प्राचीन काल के यज्ञों में विज्ञान प्रमाणित हुआ। वेद मंत्रों में विज्ञान है।

-डॉ. केशव प्रसाद मिश्र, वेदाचार्य,
छतरपुर (मध्यप्रदेश)